खीर

कृष्ण कुमार

मैं स्कूल से लौटा तो देखा, अम्मा कहीं जाने की तैयारी कर रही थीं। तीन बजा होगा। इस वक्त अम्मा को कहाँ जाना है? मैं पूछने ही वाला था कि अम्मा खुद बोल पड़ीं:

"मुन्ना, मैं किसी के घर जा रही हूँ। एक-दो घण्टे में लौट जाऊँगी। दरवाज़े की साँकल लगाकर बैठना। खाना खा लेना।"

अम्मा जल्दी-जल्दी तैयार हो रही थीं और मैं सोच रहा था कि सारे घर में अकेले कैसे रहूँगा। एक बार मेरे मन में आया कि अम्मा से कहूँ, मुझे भी साथ ले लो, लेकिन उनकी जल्दबाज़ी देखकर कुछ न कह पाया। असल में, एक और बात भी मेरे मन में थी कि कुछ देर अकेले रहकर देखूँ। अभी दीदी को आने में एक घण्टे की देर थी और पिताजी को आने में दो घण्टे की।

दो-तीन मिनट में अम्मा चली गईं और मैंने उनके निकलते ही दरवाज़ा बन्द कर लिया। अब मैं बिलकुल अकेला था। मैंने सोचना शुरू किया कि सबसे पहले मुझे क्या करना चाहिए। दिमाग में अपने से तो कुछ आ नहीं रहा था।

अम्मा ने कहा था, खाना खा लेना। मैं रसोई में गया। रोटियों का डिब्बा जाली में पड़ा था। खोला तो ठण्डी रोटियों की खुशबू आई। पास ही में स्टोव पर सब्ज़ी की कड़ाही पड़ी थी। ढक्कन उठाया तो देखा, भिण्डी थी। अम्मा भी कितना बढ़िया खाना बनाती हैं, मैंने सोचा।

मैं अपने लिए एक थाली उठाकर सब्ज़ी लेने के लिए बैठने वाला था कि मेरी नज़र रोटियों के पास रखे एक कटोरे पर गई जो कपड़े से ढँका हुआ था। मैंने सोचा, इसमें क्या होगा! जैसे ही मैंने कपड़ा हटाया तो देखा, कटोरे में साबूदाने रखे थे। मैं तुरन्त समझ गया कि अम्मा साबूदानों की खीर बनाने वाली थीं। खीर का खयाल आते ही सब्ज़ी और रोटी खाने का सारा मज़ा मन से

जाता रहा। मैंने तय किया कि अम्मा के आने से पहले मैं खुद ही खीर बनाकर खा लूँगा।

मैं तुरन्त काम में जुट गया। भूख तो पहले ही चली गई थी, यह ध्यान भी न रहा कि सारा घर सूना है और मैं अकेला हूँ। घर में कोई होता तो क्या मैं इस तरह खीर बनाने की हिम्मत करता? क्या पता! पर इस समय तो हिम्मत-ही-हिम्मत थी। मैंने जाली खोली तो दूध मिल गया। जाली के ऊपर रखे दो-चार डिब्बे खोले तो चीनी मिल गई। माचिस स्टोव के बगल में पड़ी थी।

अम्मा रसोई को कितनी अच्छी तरह से रखती हैं और मैं कभी उनकी तारीफ नहीं करता! आज शाम को उनकी तारीफों के पुल बाँध दूँगा। यह सोचते हुए मैंने स्टोव की बत्तियाँ ऊँची कीं और माचिस जलाई। साबूदानों का कटोरा ऊपर रखा और पतीले का आधा दूध कटोरे में उड़ेलकर, डिब्बा खोलकर चीनी निकाली और तीन चम्मच छोड़ दिए।

दूध गरम होने तक वहीं खड़े रहने की कोई ज़रूरत मुझे न दिखी। इसलिए मैं बाहर आ गया। कई काम याद आए जो स्कूल से आकर मुझे करने थे। कपड़े बदलने थे। बस्ता निकालना था। जूते उतारने थे। मुँह धोना था।

पहले क्या करूँ? जूते खोलूँ या मुँह धो लूँ? सोचा, मुँह धोकर जूते खोलूँगा तो हाथ फिर धोने पड़ेंगे। जूते को लोग इतनी गन्दी चीज़ क्यों समझते हैं कि उसे छूने के बाद हाथ ज़रूर धुलवाते हैं? जूता ही क्यों, बिल्ली भी। पिताजी रोज़ कहते हैं – बिल्ली वाले हाथों से खाना मत खाओ; लेकिन बिल्ली जैसी साफ चीज़ दुनिया में कोई है? पिताजी खुद ही कौन बड़े साफ रहते हैं! उनकी कमीज़ का कॉलर हमेशा काला रहता है, पर बिल्ली का गला?

मैंने बस्ते से शुरुआत की। निकर उतारकर पाजामा पहना। आँगन के पीछे गया जहाँ पानी रखा रहता था। दोनों बाल्टियाँ खाली थीं। लोटा लेकर टब से पानी निकाला। फिर मुँह धोया। कितनी बार मुँह धोता हूँ, फिर भी हर बार मज़ा आता है! तौलिए से पोंछा। नीचे नज़र पड़ी तो अपनी बेवकूफी दिखाई दी। जूतों पर छींटे चमक रहे थे। बड़ा अजीब लगा कि मैंने निकर उतारकर पाजामा तो पहन लिया था, पर जूते नहीं खोले थे। रोज़ ऐसी गड़बड़ हो तो डाँट ही पड़ती रहे। आज इसलिए हो रही है क्योंकि कोई जल्दी नहीं है। कहीं से कोई बुला नहीं रहा है। जल्दी करने से सब काम बिगड़ते हैं।

सब कुछ निपटाकर मुझे ध्यान आया कि खीर स्टोव पर रखी है। मैं भागा लेकिन तब तक साबूदाने जलकर कटोरे की तली से चिपक चुके थे। मैं कुछ घबराया ज़रूर, पर मैंने देखा कि जले हुए साबूदानों के ऊपर कुछ खीर भी थी जिससे खुशबूदार भाप उठ रही थी। मैंने

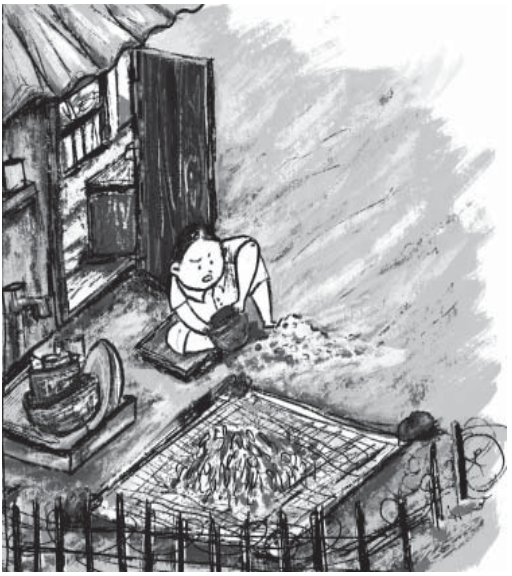

कटोरे को नीचे उतारकर स्टोव बुझा दिया और एक कटोरी लेने के लिए कूदा। कटोरी उठाकर जल्दी-जल्दी चम्मच से खीर निकाली। कुछ आधे जले हुए साबूदाने भी खुरचे।

कटोरी आधी भर गई थी। देखकर बड़ी तसल्ली हुई और खाने की जल्दी भी। लेकिन कटोरे की जली हुई तली का क्या होगा? पहले इसी का इलाज किया जाए। मैंने कटोरे को झाड़न के सहारे उठाया और सारा आँगन पार करके, टब के पास ले जाकर लोटे पर रख दिया। तब ध्यान आया कि मिट्टी की ज़रूरत पड़ेगी। पहली बार मुझे लगा कि देर होती जा रही है, कहीं कोई आ न जाए!

भागा-भागा बाहर गली में पहुँचा। उँगलियों से कुछ मिट्टी खोदी। लौटकर कटोरे की रगड़ाई शुरू की। जले हुए साबूदाने इतने कसकर चिपके थे कि छूटते ही न थे, पर मैं उन्हें कहाँ छोड़ने वाला था! चम्मच और नाखूनों से खरोंच-खरोंचकर मैं कटोरे की तली तक पहुँच गया। फिर मिट्टी घिसी। आखिरकार खीर का कूड़ा गायब था और कटोरे की तली मेरे सामने।

खुशी-खुशी कटोरा लिए मैं रसोई में घुसा। अबकी बार मैंने जो कुछ देखा, वह सचमुच गड़बड़ था। कटोरी में खीर नहीं थी और खिड़की में बिल्ली मूँछों पर जीभ फेर रही थी।

अब करने को मेरे पास कुछ न था। मैंने चुपचाप कटोरी धोई और सुखाकर बर्तनों के बीच रख दी। फिर डिब्बा खोलकर दो रोटियाँ निकालीं, भिण्डी लेकर रोटियों पर रखी और खिड़की में, जहाँ थोड़ी देर पहले

बिल्ली दिखाई दी थी, ठीक वहीं बैठकर, टाँगें हिला-हिलाकर खाने लगा।

थोड़ी देर बाद दीदी आई, पिताजी लौटे, आखिर में अम्मा आईं। सब लोग चाय पीने बैठे तो रसोई से अम्मा की आवाज़ आई, "मैं साबूदाने निकालकर गई थी, जाने कहाँ गए!"

कृष्ण कुमार: प्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं लेखक। शिक्षा के मुद्दों पर सतत चिन्तन एवं लेखन। दिल्ली विश्वविद्यालय में शिक्षा के प्रोफेसर और एन.सी.ई.आर.टी. के निदेशक रह चुके हैं। भारत और पाकिस्तान में शिक्षा पर उनकी दो पुस्तकें, *मेरा देश तुम्हारा देश* और *शान्ति का समर* चर्चित रही हैं। उनकी हाल की पुस्तकों में *शिक्षा और ज्ञान*, *चूड़ी बाज़ार में लड़की* और बच्चों के लिए *पुड़ियों की गठरी* शामिल हैं।

सभी चित्र: पूजा के. मैनन: वर्तमान में कम्यूनिकेशन डिज़ाइन की छात्रा हैं। जन्म पलक्कड़, केरल में हुआ लेकिन एक जगह से दूसरी जगह यात्रा करने के कारण बहुत-से नए लोगों से मिलना हुआ। चूँकि वे अन्यथा बातचीत करने में झिझकती थीं, स्केचिंग ने उनके विचारों को सम्प्रेषित करने और टिप्पणियों का दस्तावेज़ीकरण करने में एक माध्यम का काम किया। धीरे-धीरे रेखाचित्र कहानियों में बदल गए जिन्होंने उन्हें जीवन और लोगों को समझने और खुद को व्यक्त करने में मदद की।

यह कहानी राजकमल प्रकाशन द्वारा प्रकाशित कृष्ण कुमार के कहानी संग्रह *आज नहीं पढ़ूँगा* से ली गई है।